

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत से “धन का प्रवाह”

प्रोफेसर आदेश गुप्ता

प्रोफेसर इतिहास विभाग

दयानंद एंग्लो वेदिक कॉलेज कानपुर

भारत में अंग्रेजों के आगमन से पूर्व ही पुर्तगाली, डच एवं फ्रांसीसी कम्पनियाँ व्यापार के उद्देश्य से भारत में मौजूद थीं। अतः अंग्रेज भी पूर्वी देशों से व्यापार करने को इच्छुक हुए। इंग्लैण्ड ही वह प्रथम यूरोपीय शक्ति थी जिसने 1582 ई० में अन्तरीप (केप) की परिक्रमा करते हुए सागर में पुर्तगालियों के एकाधिकार को भंग करने का साहस किया था। जब 1588 ई० में अंग्रेजी सेना ने स्पेन के एक जहाजी बेड़े को पराजित कर दिया तो इंग्लैण्ड की सरकार ने भी कुछ व्यापारियों को अन्तरीप के रास्ते समुद्री व्यापार करने की इजाजत दे दी।

सरकार की ओर से अनुमति मिल जाने पर अनेक नाविकों ने सामुद्रिक यात्रायें की। इंग्लैण्ड के व्यापारियों ने व्यापारिक दृष्टि को ध्यान में रखकर सबसे महत्वपूर्ण कदम 31 दिसम्बर, 1600 ई० में उठाया। इस में “ईस्ट इण्डिया कम्पनी” की स्थापना की। उन्होंने इस कम्पनी का नाम “द गवर्नर एण्ड कम्पनी ऑफ मर्चण्ट्स ऑफ लन्दन ट्रेडिंग इन टू द ईस्ट इण्डिया कम्पनी” (The Governor and company of Merchants of Landon Trading in to the East India) इंग्लैण्ड की महारानी एलिजाबेथ प्रथम ने इन व्यापारियों को अपना व सहयोग प्रदान किया तथा कम्पनी को 15 वर्षों के लिए पूर्वी देशों से व्यापार करने की अनुमति प्रदान की।

18वीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य के छिन्न-भिन्न हो जाने से देश की आर्थिक व्यवस्था भी डाँवाडोल हो गई। अनेकों देशों राजाओं के परस्पर युद्धों की वजह से देश का आर्थिक क्रियाकलाप भंग हो चला था। देश अनेकों छोटे-छोटे भागों में विभाजित हो चुका था। लूट-खसोट करने वाले विभिन्न दल उभरकर सामने आ गये। भारतीय माल पर चुंगी तथा कर की अधिकता के कारण व्यापार व खजने में भारी कमी आ गयी थी। इन सभी परिस्थितियों का फायदा विदेशी कम्पनियों ने पूरी तरह से उठाया और उन्होंने देश की राजनीति में भी हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने मुगल सम्राट जहाँगीर के शासन काल में सूरत में स्थायी रूप से एक कारखाना स्थापित कर लिया था। सर टॉमस रो, जिन्हें इंग्लैण्ड के शासक जेम्स प्रथम ने 1613 ई० में मुगल सम्राट जहाँगीर के दरबार में भेजा था, उसने धीरे-धीरे आगरा, अहमदाबाद, बम्बई, पटना, कासिम बाजार, कलकत्ता आदि में अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित कर लिये। सन् 1757 ई० में प्लासी की विजय व 1764 ई० में बक्सर के युद्ध की विजय के पश्चात् कम्पनी को बंगाल पर पूर्ण रूप से एकाधिकार प्राप्त लिया था, किन्तु भारत का शासन कम्पनी के हाथ से निकलकर ब्रिटिश ताज के हाथों में चला गया और सन् 1947 ई० तक भारत में ब्रिटिश ताज की सत्ता बनी रही।

कम्पनी ने अपने शासनकाल में जिन आर्थिक नीतियों का प्रयोग किया गया था, निश्चित रूप से उसने भारत को दरिद्रता के दरवाजे पर ला खड़ा किया। ठीक उसी प्रकार ब्रिटिश शासन का मूलभूत लक्ष्य भारत के आर्थिक हितों का शोषण करना था। किसी हद तक यह ठीक है कि ब्रिटिश शासन काल में उस समय की स्थिति को ध्यान में रखकर थोड़ी बहुत उदारता का परिचय अवश्य दिया गया था किन्तु फिर भी कुल

मिलाकर भारत का आर्थिक शोषण ही हुआ था। ब्रिटिश शासन के दौरान अंग्रेजों के द्वारा हुए “भारत के औपनिवेशिक शोषण को तीन चरणों में विभक्त किया गया है” –

प्रथम – 1757 ई० मसे 1813 ई० तक की अवधि “वाणिज्यिक प्रभाव” की थी, जिसके अन्तर्गत ईस्ट इण्डिया कम्पनी को खुली लूट और व्यापार पर एकाधिकार प्राप्त था।

द्वितीय – 1813 ई० से 1853 ई० तक की अवधि “स्वतन्त्र व्यापार” के औद्योगिक एवं पूंजीवादी शोषण का काल रही।

तृतीय – 1858 ई० से 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक अवधि “वित्तीय पूंजीवाद” का काल थी।

औपनिवेशिक शोषण के इन तीनों चरणों के सम्बन्ध में यह कथन काफी हद तक उचित है – “भारत का यह आर्थिक शोषण तीन चरणों में विभक्त अवश्य है, लेकिन फिर भी ये एक-दूसरे के काफी नजदीक हैं क्योंकि शोषण का युग तो कभी समाप्त ही नहीं हुआ बल्कि वह दूसरे किसी नये रूप में होता ही रहता था।”¹

एकाधिकारी कम्पनी द्वारा भारत की विजय –

भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद का काल 1757 से ही प्रारम्भ हो जाता है। “प्लासी की लड़ाई के बाद ही इंग्लैण्ड की ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बंगाल पर अपना प्रभुत्व जमा लिया था।”² 17वीं और 18वीं शताब्दी में यूरोप देशों के कई व्यापारी भारत के व्यापार पर कब्जा करने की जी-तोड़ कोशिश कर रहे थे। प्रारम्भ में कम्पनी का उद्देश्य ठीक वही था जोकि व्यापारिक पूँजी की एकाधिकारी कम्पनियों का होता है। समुद्र पार के किसे देश के माल और विभिन्न उत्पादनों पर एकाधिकार करके माल कमाना था। “ईस्ट इण्डिया कम्पनी का उद्देश्य इंग्लैण्ड में निर्मित माल के लिए बाजारों की खोज करना नहीं था बल्कि भारत के ऐसे सामान जोकि इंग्लैण्ड व यूरोप के देशों में बहुत अधिक प्रसिद्ध थे, पर नियन्त्रण रखना था।”³

अतः कम्पनी का मुख्य लक्ष्य भारत के व्यापार पर एकाधिकार प्राप्त करना था। दूसरे शब्दों में, कम्पनी अपनी वस्तुओं को अधिक से अधिक बेचना और भारत में कम से कम कीमत पर खरीदना चाहती थीं ताकि अधिक से अधिक लाभ कमा सकें। कम्पनी ने अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए निम्न तरीके अपनाये –

1. कम्पनी ने व्यापार पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने के लिए सभी सम्भव प्रतिद्वन्दियों को समाप्त कर दिया।
2. कम्पनी ने लगातार यह प्रयास किया कि वस्तुयें कम से कम मूल्य पर क्रय की जायें और अधिक से अधिक मूल्य पर विक्रय की जायें।
3. कम्पनी ने अपने लक्ष्य को सफल बनाने हेतु इंग्लैण्ड के व्यापारियों को रिश्वत देकर भारत से दूर रखा।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने यूरोप के कई राष्ट्र जैसे फ्रांस तथा हॉलैण्ड को भारत से दूर रखने के लिए भीषण युद्ध लड़े। कम्पनी ने भारत में राजनीतिक शक्ति व व्यापारिक अधिग्रहण को प्राप्त करने के लिए भारतीय राजाओं से भी युद्ध लड़े। कम्पनी तथा भारतीय राजाओं के मध्य लड़े गये युद्ध बंगाल की विजय, आंग्ल – मैसूर युद्ध, आंग्ल – मराठा युद्ध आदि प्रमुख थे। “कम्पनी ने अपने आरम्भिक समय में भारत को बहुत अधिक

¹ दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं० – 120

² चौपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, इतिहास, पृष्ठ सं० – 166

³ दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं० – 124–25

मात्रा में लूटा। 18वीं शताब्दी में भारत से जितना भी धन इंग्लैण्ड भेजा गया। वह सब भारत के शोषण तथा बेतहाशा लूट- खसोट करके हासिल किया गया था।⁴ कम्पनी ने समुद्र के तटीय क्षेत्रों में नौसैनिक शक्ति की सहायता से जबरदस्ती भारतीय व्यापारियों को विदेश व्यापार से वंचित करना आरम्भ कर दिया। “भारतीय व्यापारियों के माल के निर्यात पर अधिक मात्रा में चुंगी लगाकर इंग्लैण्ड और यूरोप के अन्य देशों में पहुँचने से रोक दिया।”⁵

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सामान्य जनता पर स्थानीय टैक्स लगाकर खजाने को बढ़ाने की भी कोशिश की, किन्तु जब कम्पनी के पास बंगाल, बिहार व उड़ीसा के कुछ हिस्से अधिकार में आ गये तो कम्पनी ने नवाबों और जमींदारों की स्थानीय पूँजी को हड़पना प्रारम्भ कर दिया। “कम्पनी ने विनिमय में पलड़ा भारी रखने के उद्देश्य से बल प्रयोग के कई तरीके अपनाये जिससे कि व्यापार और लूट के मध्य की रेखा धुंधली पड़ने लगी थी।”⁶

भारत में “लूट” की प्रक्रिया की शुरुआत 1757 ई० के पश्चात् ही आरम्भ हो गयी थी। “भारत में प्लासी के युद्ध के पश्चात् कम्पनी ने किसी भी कीमती धातु का आयात नहीं किया, बल्कि भरत से निर्यात किए गए माल का जरा सा अंश भी नहीं लौटाया।”⁷ इस तरह निरन्तर भारत से सम्पत्ति का हनन होता गया और इंग्लैण्ड धनी। अतः “भारत में औपनिवेशिक चरण की अस अवधि में “व्यापार” के नाम पर व्यापार कम और लूट अधिक थी।”⁸

औद्योगिक क्रान्ति व पूँजीवादी शोषण का युग –

ईस्ट इण्डिया कम्पनी जैसे ही भारत में एक प्रादेशिक शक्ति के रूप में उभर कर सामने आयी तो यह सवाल उठा कि भारतीय उपनिवेश किसके हितों की पूर्ति करेगा। इसी समय “इंग्लैण्ड में जनमें नये औद्योगिक वर्ग ने 1813 ई० में कम्पनी के एकाधिकार को समाप्त करके “स्वतन्त्र व्यापार” के मार्ग को प्रशस्त किया।”⁹ जिससे कि भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के दूसरे चरण का प्रारम्भ हुआ।

भारत में ब्रिटिश शासन की नीति 1813ई० से 1858 ई० तक “स्वतन्त्र भारत” के औद्योगिक एवं पूँजीवादी शोषण की थी। “1813 ई० के पश्चात् इंग्लैण्ड की आधुनिक मशीनों से निर्मित माल ने भारतीय मण्डियों व बाजारों पर कब्जा कर लिया।”¹⁰ इस युग में अंग्रेज व्यापारियों तथा उद्योगपतियों ने बड़ी तेजी से भारतीय व्यापार का मूल रूप ही परिवर्तित कर दिया था। “भारत अभी तक निर्यात करने वाला देश था लेकिन आने वाले समय में यह आयात करने वाला देश बन गया।”¹¹ इंग्लैण्ड के उद्योगपतियों ने भारत के बाजारों में अंग्रेजी सूती कपड़ों की बाढ़ ला दी। मार्क्स ने इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था – “यह वह समय था जब सूती वस्त्रों के घर में सूती वस्त्रों की अधिकता कर दी गयी थी।”¹² इसी युग में भारतीय पारम्परिक हस्तकालाओं का भी विनाश कर दिया गया। सन् 1934 ने लार्ड विलियम बैटिक ने हस्तकालाओं के विनाश के

4. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-112

5. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-113

6. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं० - 126

7. चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं०-167

8. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-127

9. चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं० - 188

10. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-114

11. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-136

12. सरकार, सुमित : आधुनिक भारत, पृष्ठ सं० - 44

सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुये कहा था कि “भारत के इतिहास में इस दुर्दशा का व्यापार के इतिहास में कोई जोड़ नहीं है। भारत के मैदानों को भारतीय बुनकरों की हड्डियाँ सफेद कर रही थी।”¹³

उपनिवेशवाद के इस चरण में कम्पनी तथा ब्रिटिश उद्योगपतियों ने मिलकर भारत के व्यापार तथा उद्योग धन्धों को पूरी तरह से नष्ट कर दिया था और भारतीय कपड़ों को यूरोप की मण्डियों से निष्कासित कर दिया। “अंग्रेजों ने भारतीय अर्थव्यवस्था के प्राचीन आधार हथकरघा और चरखे को तोड़ डाला।”¹⁴ भारत जो कपड़े के घर के नाम से प्रसिद्ध था उसे विदेशी सूती कपड़ों से भर दिया तथा भारत की उत्पादन व्यवस्था को तहस-नहस कर दिया।

वित्तीय पूँजीवाद – “वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में बहुत अधिक मात्रा में भारत की लूट से जो पूँजी एकत्रित हुई उससे इंग्लैण्ड में नवीन औद्योगिक क्रान्ति का शुभारम्भ हो गया।”¹⁵ ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बम्बई के उद्योगों के प्रति ही नहीं चुंगी की भेदभाव की नीति अपनायी बल्कि धन एकत्रित करने के लिए अनेक प्रतिबन्धों की मदद से देशों पूँजीवाद के विकास को क्षीण कर दिया था। “भारत में जब इस विदेशी पूँजी का आगमन हुआ तो इसका ध्येय देश व देश की आवाम का आर्थिक स्तर ऊँचा करने का कदापि नहीं था, बल्कि उनका प्रमुख उद्देश्य भारतीय साधनों का अधिक से अधिक शोषण करके लाभ कमाना था।”¹⁶ अंग्रेज व्यापारियों एवं अधिकारियों का उद्देश्य यूरोपीय उद्योगों को अधिक से अधिक प्राप्तिहित करना था।

ब्रिटिश उपनिवेशवाद का यह चरण भारत की आन्तरिक एवं बाह्य घटनाओं का परिणाम था। आन्तरिक दृष्टिकोण से भारत के सम्पूर्ण ढाँचे पर ब्रिटिश उपनिवेशवाद के दो भयंकर परिणाम सामने आये। इससे पहले कि देश में कोई और घटना घटित हो, सन् 1857 का विद्रोह हो गया जोकि ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विस्तार तथा भारत के अधिकाधिक क्षेत्रों को हथियाने, कम्पनी की अधिक लगान व्यवस्था का प्रत्यक्ष परिणाम था। कुछ विद्वानों ने इस विद्रोह को पहला स्वतन्त्रता संग्राम कहा है किन्तु पं० जवाहर लाल नेहरू ने इस सम्बन्ध में कहा, “यह पुराने ढंग से स्वतन्त्रता की कोशिश थी जिसमें सामान्य जनता के लिये कोई जगह नहीं थी जबकि सामान्य जनता ने भी इस विद्रोह में अधिक संख्या में भाग लिया था। इस विद्रोह का स्वरूप प्रतिक्रियावादी होने के कारण इससे सफल न होने के आसार शुरू से ही दिखाई पड़ रहे थे।”¹⁷ अंग्रेजों ने इसे नाराजगी एवं असंतोष की भावना समझकर उपनिवेशवादी नीतियों में परिवर्तित कर दिया।

“भारत ने सन् 1857 के पश्चात् ही विदेशी वित्त पूँजी का प्रयोग देश के विभिन्न क्षेत्रों में किया गया और 20वीं शताब्दी के आरम्भ तक इसने अपनी स्थिति काफी मजबूत कर ली थी।”¹⁸ देश में नये-नये उद्योगों व कारखानों का विकास हुआ तथा बैंक, डाक व्यवस्था, यातायात व संचार के साधनों को भी विकसित किया गया। विदेशी पूँजी का उपयोग 1914 के पूर्व केवल कुछ ही साधनों में किया गया जैसे – रेलवे, सड़क, जहाजरानी तथा खनिज उत्पादनों में कोयला, सोना व वित्तीय शाखाओं की बैंकों, निगम इत्यादि। अनुमानों के अनुसार 1913 ई० में विदेशी बैंकों के पास भारत की कुल राशि का

13. चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं०-176

14. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-114

15. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-132

16. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-140

17. नेहरू, जे०एल० : भारत की खोज, पृष्ठ सं०-324

18. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-154

3/4 भाग था जबकि भारत की बैंकों के पास मात्र 1/4 भाग था। अंग्रेजों के पास अत्यधिक धन होने का दूसरा कारण यह भी था, “19 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही शुरू किया गया “स्वतन्त्र व्यापार” के फलस्वरूप भारत की “लूट” की पुरानी पद्धति अभी भी बरकरार थी।”¹⁹ बल्कि यह तीसरे चरण और भी तेजी से हो रही थी। इस समय इसे “नजराना” का नाम दे दिया गया था और इस राशि को “गृह शुल्क” के अन्तर्गत इंग्लैण्ड भेज दिया जाता था। “1851 से 1901 के मध्य ब्रिटिश अधिकारियों ने “गृह शुल्क” के नाम पर 7 गुना धन अर्जित किया और यह पहले की अपेक्षा 25 लाख पौण्ड से बढ़कर 1 करोड़ 73 लाख पौण्ड हो गयी।”²⁰

भारत के धन का प्रवाह

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत से “धन का प्रवाह” निरन्तर होता रहा। अंग्रेजों ने भारत का दिल खोलकर शोषण किया और भारतीय सम्पत्ति को बहुत अधिक मात्रा में लगातार इंग्लैण्ड भेजते रहे। “1857 तक अंग्रेज भारत से माल खरीदने के लिए बहुमूल्य धातुयें लाते थे क्योंकि उनके पास भारत से व्यापार करने के लिए कोई और सामान था ही नहीं, जिसकी भारत को आवश्यकता हो।”²¹ इसलिए कम्पनी को अपने प्रारम्भिक दिनों में भारत से व्यापार करने के लिए सोना, चांदी और विदेशी सिक्कों का प्रयोग करना पड़ा। “किन्तु प्लासी के युद्ध के पश्चात् कम्पनी को बंगाल, बिहार व उड़ीसा की दीवानी प्राप्त हो गई और तभी से कम्पनी इन्हें अपनी निजी सम्पत्ति कहने लगी, जिससे अब भारत में खुलेआम सम्पत्ति के दोहन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई।”²² कम्पनी बंगाल में सैनिक बल से जो भी धन प्राप्त करती, उसी से बंगाल से माल खरीद कर इंग्लैण्ड को भेज देती थी।

1765 ई0 में क्लाइव ने भारत में स्थित कम्पनी के डायरेक्टरों के नाम एक पत्र भेजा जिसमें यह कहा गया था – “कम्पनी को भारत का प्रशासन अपने तक सीमित रखने के लिए यह चाहिए कि वह मुनाफे के रूप में एक निश्चित राशि इंग्लैण्ड भेज दे।”²³ सन् 1773 ई0 में पार्लियामेन्ट में इस सन्दर्भ में एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी जिससे पता चलता है, “कम्पनी ने अपने प्रारम्भिक छः वर्षों में बंगाल से प्राप्त कुल राजस्व 13,066,761 पौण्ड तथा कुल व्यय 9,027,609 पौण्ड दिखाया था, इसमें 4,037,152 पौण्ड की राशि विशुद्ध लाभ थी।”²⁴ इस प्रकार कम्पनी ने बंगाल से प्राप्त कुल आय का लगभग 1/3 भाग शुद्ध लाभ के रूप में इंग्लैण्ड भेज दिया।

भारत में कम्पनी की “लूट” के साथ ही साथ अंग्रेज अधिकारियों व कर्मचारियों ने भी व्यक्तिगत तौर पर बहुत अधिक धन कमाया। “भारत में कार्य कर रहे अनेकों अंग्रेज कर्मचारी भी राजनीतिक शक्ति का लाभ उठाकर धन एकत्रित के इंग्लैण्ड में अपने परिवार जनों व सगे – सम्बन्धियों को मुद्रा व अन्य कीमती चीजों के रूप में भेज देते थे।”²⁵ यह सारा धन ब्रिटिश नागरिकों द्वारा भारत से ही प्राप्त किया जाता था जिसे वे स्वदेश भेजते रहते थे। “इतना ही नहीं जब स्वयं क्लाइव भारत आया था तो उसके पास कुछ भी नहीं था लेकिन जब वह यहाँ से गया तो उसके पास लगभग ढाई लाख पौण्ड

19. दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, पृष्ठ सं0-152

20. दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, पृष्ठ सं0-153

21. सरकार, सुमति : आधुनिक भारत, पृष्ठ सं0-44

22. दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, पृष्ठ सं0-127

23. दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, पृष्ठ सं0-128

24. दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, पृष्ठ सं0-129

25. चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं0-168

था और वह भारत में एक जागीर भी स्थापित कर गया था जिससे उसे 27,000 पौण्ड प्रतिवर्ष प्राप्त होता था।²⁶ क्लाइव ने यह सम्पूर्ण राशि स्वयं ही अपने साधनों के बल पर प्राप्त की थी इसमें कम्पनी का एक अंश भी शामिल नहीं था। “गवर्नर वेरेल्स्ट की रिपोर्ट के आधार पर 1766 से 1768 के मध्य भारत से 6,311,250 पौण्ड का निर्यात किया गया जबकि आयात सिर्फ 624,375 पौण्ड ही किया गया।”²⁷ इस प्रकार जब ब्रिटिश नागरिकों स्वयं इतनी बड़ी मात्रा में धन कमाया था तो कम्पनी द्वारा प्राप्त किया इस राशि से कई गुना अधिक मात्रा में होगा।

भारत से धन लूटने का एक और तरीका भी था। कम्पनी ने सम्पूर्ण भारत में जो राज्य – विस्तार की नीति अपनायी थी, इस कारण उनके खर्च की मात्रा इतनी अधिक थी कि प्रायः इंग्लैण्ड की सरकार से उन्हें कर्जा भी लेना पड़ता था, बाद में कम्पनी को ब्याज के साथ उस कर्ज को इंग्लैण्ड की सरकार को देना पड़ता था। “भारत इंग्लैण्ड को प्रतिवर्ष 2 करोड़ स्लाटिंग “गुह-शुल्क” रूप में देता था।”²⁸ जिसमें कर्ज का ब्याज, सिविल शासन का खर्च, सेना, स्टोर, रेलवे आदि का खर्च सम्मिलित होता था। “सन् 1890-1900 के मध्य भारत ने इंग्लैण्ड को लगभग 1 करोड़ 70 लाख रुपये की सम्पत्ति भेजी।”²⁹ इस तरह भारतीय सम्पत्ति का लगातार विदेश जाना और बदले में कुछ भी वापस न मिलने के कारण भारत की आर्थिक स्थिति निम्नस्तार होती गयी। परिणाम स्वरूप भारत लगातार शनैः-शनैः आर्थिक दृष्टि से गरीब होता चला गया।

भारत में निरन्तर हो रहे इस आर्थिक शोषण के सम्बन्ध में सर्वप्रथम दादाभाई नौरोजी ने रोशनी डाली। दादाभाई नौरोजी भारत से धन-प्रवाह के प्रबल विरोधी थे। उन्होंने कहा था – “भारत का धन भारत से विदेश को जाता था और वहीं उन्हें कर्ज के रूप में दे दिया जाता था। इस कारण भारतीयों को और अधिक धन उस कर्ज तथा कर्ज पर लगने वाले ब्याज को चुकाने के लिए इकट्ठा करना पड़ता था। यह एक ऐसा चक्रव्यूह था जिससे निकल पाना बहुत ही मुश्किल था।”³⁰ दादाभाई नौरोजी का मानना था कि भारत से धन प्रवाह का प्रत्यक्ष सम्बन्ध भारत में लगातार जमा हो रही विदेशी पूँजी थी और इस आर्थिक प्रवाह की सारी बुराई की जड़ भारतीय शासन में अंग्रेजों को अधिकाधिक संख्या में नौकर रखना था। “भारतीय जनता की भयंकर गरीबी और निम्न स्थिति का प्रमुख कारण विदेशी लोगों को भारतीय शासन में अधिक संख्या में नौकरी देना तथा देश में के भौतिक साधनों की निष्क्रियता और धन का निर्गम था।”³¹ उन्होंने फिर कहा, यह जीवन और मरण का प्रश्न है। अतः इस बुराई को समाप्त कर देना चाहिए जिससे कि भारत प्रत्येक दशा में फिर सम्पन्न हो जायेगा।

आर्थिक प्रवाह का अनुमान –

भारत से धन का बाह्य प्रवाह कितना हुआ इस सम्बन्ध में अनेकों इतिहासकारों व अर्थशास्त्रियों में काफी मतभेद है। सन् 1859 में जार्ज विन्गोट का अनुमान था कि 1835 से 1851 के समय तक धन का प्रवाह 42, 21,611 प्रतिवर्ष था। सन् 1901 ई० में विलियम डिग्वी ने यह अनुमान लगाया था कि 1757 से 1815 के मध्य कुल धन के प्रवाह की मात्रा 50 करोड़ और 100 करोड़ के बीच थी। सन् 1948 में एक अमेरिकन विद्वान प्रो०

26. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-129

27. दत्त, आर०पी० : आज का भारत, पृष्ठ सं०-129

28. चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं०-193

29. चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं०-193

30. नौरोजी, दादाभाई : पावर्टी एण्ड अन ब्रिटिश रूल इन इण्डिया।

31. नौरोजी, दादाभाई : पावर्टी एण्ड अन ब्रिटिश रूल इन इण्डिया।

होल्डन फरबर ने लिखा था कि 1783–1793 के मध्य यह मात्रा 19 लाख पौण्ड प्रतिवर्ष निश्चित की गयी थी। जबकि कम्पनी इस समय तक एक छोटे से पैमाने पर ही कार्यरत थी। विलियम डिगबाई³² ने 19वीं शताब्दी के अन्त तक इस धन का बाह्य प्रवाह 60,080 लाख बताया था। श्री मेकलीन ने बताया था कि “भारत इंग्लैण्ड को प्रतिवर्ष 300,000,000 की राशि का निर्यात करता था जिसके बदले में उसे कुछ भी नहीं दिया जाता था। विदेशी विद्वानों की तरह भारत के कुछ राष्ट्रवादी नेताओं ने भी अपनी-अपनी गणना प्रस्तुत की थी। 1897 ई० में दादाभाई नौरोजी³³ ने 1893 –93 के मध्य के दस वर्षों में भारतीय धन के प्रवाह की मात्रा 35 करोड़ 90 लाख पौण्ड निश्चित की थी। सन् 1901 ई० में आर०सी० दत्त³⁴ ने 1860–1900 के बीच 2 करोड़ 20 लाख पौण्ड प्रतिवर्ष का अनुमान लगाया था। इस प्रकार “अंग्रेजी साम्राज्यवादियों ने सन् 1930 के पश्चात् भारत से 13 करोड़ का 14 करोड़ पौण्ड के बीच सिर्फ “शुल्क” के रूप में धन प्राप्त किया था। जबकि भारत इतने ही धन से भिलाई के आकार के तीन इस्पात के कारखानों का निर्माण कर सकता था जोकि भारत के इस साम्राज्यवादी युग की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण साबित होते।”³⁵ भारत से हो रहे इस धन –प्रवाह के सम्बन्ध में सर जॉन स्टेची ने बड़ी ही चालाकी एवं धूर्धता से उत्तर दिया, “भारत सचिव भारत में सरकारी कोष के नाम बिल देता है, जिसका भुगतान भारत में सार्वजनिक राजस्व की राशि के में किया जाता है, बाद में इन्हीं बिलों के भुगतान के फलस्वरूप भारत में व्यापारी और इंग्लैण्ड में भारत – सचिव को धन प्राप्त होता है।”³⁶

32. डिगबाई, विलियम : प्रॉसपरस् ब्रिटिश इंडिया, लंदन

33. नौरोजी दादाभाई : पावर्टी एण्ड अन ब्रिटिश रूल इन इंडिया

34. दत्त, आर०सी० : भारत का आर्थिक विकास

35. पैवलोव, वी०आई० : इकोनॉमिक फ्रीडम वर्सेस इम्पेरिलिज्म (न्यू देहली), पृष्ठ सं० – 7

36. स्टेची, सर जॉन : भारत (1888, लंदन) पृष्ठ सं० – 115